

Reg. No. : N-1316/2014-15
Approved by UGC

ISSN : 2394-2207
IIJ Impact Factor : 2.011



An International Half Yearly Refereed Research Journal (Art & Humanities)

Vol. : IV

No. I, Part-II

November, 2017-April, 2018

सम्पादकद्वय
डॉ० राधेश्याम मौर्य
शिवेन्द्र कुमार मौर्य

सह-सम्पादक
डॉ० मनोहर लाल

प्रकाशक
जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़-२३०००१ (उ०प्र०)

■ मध्यमारीय आदिवासी	72-75
पार्वती तिकी	
■ दलित समाज के आइने में निराला का साहित्यिक चिंतन	76-80
हरिश्चन्द्र यादव व प्रो० चन्दा बैन	
■ आधुनिक बोध की वाचक कृति : अन्धायुग	81-84
मोना यादव	
■ कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से अद्वितीय : अन्धायुग	85-88
रत्नाकर यादव	
■ लोक साहित्य और अन्य विषयों में अन्तर्सम्बन्ध	89-92
दीपेश मिश्र	
■ हठयोगी कबीर	93-98
डॉ० बिपिन कुमार	
■ धर्मशास्त्रों में दण्ड का स्वरूप	99-102
नागमणि त्रिपाठी	
■ सांसद आदर्श ग्राम योजना : एक परिचय	103-108
अंजली जायसवाल, डॉ० अभिनव शर्मा	
■ हिन्दी साहित्य का फिल्मान्तरण	109-112
राखीक्लेमन्ट	
■ श्रीमद्भगवद्गीताशांकरभाष्य में कर्म तथा सन्यासमार्ग	113-116
दीप्ति सिंह	
■ बौद्ध धर्म के विकास में आनन्द स्थविर का योगदान	117-120
विश्व दत्त	
■ 'बीसलदेव रासो' में स्त्री स्वर	121-126
सोनम सिंह	
■ फॉस : पूँजीवादी अर्थव्यवस्था और किसान आत्महत्या	127-130
संजय कुमार	
■ ललित निबन्ध मनबोध मास्टर की डायरी के आइने में डॉ० विवेकी राय	131-136
डॉ० सुनीता यादव	
■ बदलते परिवेश और प्रेमचंद की प्रासंगिकता	137-141
डॉ० लल्लन यादव	
■ "माध्यमिक स्तर के विज्ञान एवं कला वर्ग के विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य का तुलनात्मक अध्ययन"	142-144
डॉ० भूपाल सिंह	
■ हिन्दी की विभिन्न बोलियों में देशप्रेम की एकात्मता	145-153
शिवराम मौर्य	
■ बौद्ध मूर्तिशिल्प में सौन्दर्य बोध	154-157
कृष्ण देव पाण्डेय	
■ मेहरुन्सिसा परवेज़ के कथा साहित्य में नारी चेतना	158-161
डॉ० अभिलाषा शर्मा	
■ दो संस्कृतियों की अद्भुत दास्तान : पारिजात	162-164
सुषमा	

दलित समाज के आईने में निराला का साहित्यिक चिंतन

हरिश्चन्द्र यादव*

प्रो० चन्दा बैन**

निराला मानवीय संवेदना के आधार पर दलित समाज के उत्थान के पक्षधर थे, इसी नाते अमानवीय वर्ण-व्यवस्था के खिलाफ थे। निराला ने समझ लिया था कि एक दिन दलित समाज की सहनशीलता ही उनका प्रमुख हथियार बनकर विद्रोह करेगा और अपने अधिकारों की मांग भी करेंगे। "शूद्र शक्तियों से यथार्थ भारतीयता की किरणें फूटेंगी। वे ही भविष्य के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य हैं, और ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि दृष्ट जातियाँ शूद्र। खुदाई सजा ऐसी ही होती है। चिरकाल तक लड़कर ब्राह्मण-क्षत्रिय पस्त हो गए हैं...उनका कार्य अब जातियां करेगी जो अब तक सेवा करती आयी हैं। भारत तभी तक पराधीन है जब तक वे नहीं जागतीं। उनका कर्म क्षेत्र में उतरना ही भारत का स्वाधीन होना है।" शूद्रों के प्रति निराला का यह मत नितांत मौलिक है और शूद्र संबंधी निराला की यह विचारधारा उनकी अनेक कविताओं का आधार बनी हैं। जिसमें निराला ने समकालीन छायावादी कवि यथार्थ को त्याग कर कल्पना-लोक में विचरण कर रहे थे तब ऐसे समय में कवि निराला की कविताओं का केन्द्र दलितजन था। कविता में निराला ने समाज के नग्न यथार्थ का चित्रण किया है। कवि ने मूक जीवन के माध्यम से संसार के लोगों की दलित के प्रति स्वार्थपरता और क्रूरता का वर्णन किया है। कविता समाज में दलितों के बुरी अवस्था का चित्रण एवं उनकी सहनशक्ति की असीमता की घोषणा के साथ आरम्भ होती है-

"सहजाते हो/उत्पीड़न की क्रीड़ा सदा निरंकुश नग्न, /हृदय तुम्हारा दुर्बल होता भग्न, /अन्तिम आशा के कानों में/स्पन्दित हम-सबसे प्राणों में /अपने चर की तप्त व्यथाएं,/क्षीण कण्ठ की करुण कथाएं /कह जाते हो /और जगत की ओर ताककर /दुःख हृदय का क्षोभ त्यागकर,/सह जाते हो।"²

कवि के हृदय में सहानुभूति तो है लेकिन अभी तक उसका स्वरूप ठोस रूप ग्रहण नहीं कर पाया है। इसलिए कवि दीन को संघर्ष करने की प्रेरणा देने की बजाय उसे दुःखों का भय दिखलाकर दूर ही रहने की सलाह देता है-

"यहां की मत आना/उत्पीड़न का राज्य, दुःख ही दुःख /यहां है सदा उठाना।"³

दीन-दलित को सचेत करने की प्रक्रिया में कवि समाज के इस नियम की ओर भी इशारा करता है कि यहां जो क्रूर है, वही शूर है। शक्तिशाली जो भी कार्य करता है उसको समाज सहर्ष स्वीकार करता है।

कविता दीन के अशांतिमय जीवन की भाग्यवादी घोषणा के साथ समाप्त हो जाती है। यहां तक आते-आते वाचक अपने जैसे तमाम भुक्त भोगियों को साथ लेकर वक्तव्य देता है-

"यहीं मेरा, इनका, सबका जीवन,/दिवस का किरणोज्ज्वल उत्थान/रात्रि की सुप्ति, पतन,/ दिवस की कर्म-कुटिल तम भ्रांति,/रात्रि का मोह, स्वप्न भी भ्रांति,/सदा अशांति।"⁴

यहाँ कवि का दृष्टिकोण कर्म पर आधारित न होकर भाग्यवादी हो गया है। असहाय दीन यह

*शोधार्थी, हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) 470003

**शोध निर्देशक, हिन्दी विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) 470003

तो समझ गया है कि उसका शोषण हो रहा है, किन्तु वह इस असहाय्यवस्था से उबरने का कोई प्रयास करता हुआ दिखलाई नहीं देता। मुक्ति का प्रयास, सवर्णों के प्रति विरोध-विद्रोह कहीं नहीं है। दीन के प्रति करुणा की चेतना तो है लेकिन वह भी सुसुप्तावस्था में।

कविता के आरम्भ में कवि ने 'कर्ण' और 'अखिल विश्व' का अद्वैत बतलाया है। लेकिन यह समझ में नहीं आता है कि अगर यही कर्ण समस्त सृष्टि का नियन्ता है तो यह इतना विवश क्यों है? विरोध करना तो दूर वह अपने बचाव की स्थिति में भी नहीं है—

“बीत गये कितने दिन—कितने मास! / पड़े हुए सहते हो अत्याचार / पद—पद पर सदियों के पद—प्रहार; / बदले में, पद में कोमलता लाते, / किन्तु हाय, वे तुम्हें नीच ही हैं कह जाते।”⁵

‘महाराज शिवाजी का पत्र’ नामक कविता राष्ट्रीय उद्बोधन गीत है। स्वार्थान्ध राजा जयसिंह को विभिन्न उदाहरणों के द्वारा सही रास्ता दिखलाने का प्रयास शिवाजी ने किया है। प्रस्तुत लम्बी कविता में निराला ने राष्ट्र की उन्नति के लिए दलितोंद्वारा की अपनी शर्त को स्थापित किया है। जैसे कि हम पहले भी स्पष्ट कर आए हैं कि— “निराला की स्पष्ट मान्यता थी कि राष्ट्र के विकास के लिए जो नितांत पद दलित, शोषित एवं हीन हैं, उनको उठाना होगा। जिससे वे अन्य वर्गों के समान हो सकें और तभी सर्वजन विकास की रूपरेखा संभव हो सकती है इसी सिद्धांत से परिचालित होकर प्रकृति पुरातन एवं जीर्ण पौधों को रस प्रदान करती है, यही सिद्धांत भारत की स्वतंत्रता की अनिवार्य उपलब्धि है।”⁶

कवि ने राष्ट्रीय एकता एवं समृद्धि के लिए सवर्ण और निम्न जातियों की एकता की आह्वान किया है—

“व्यक्तिगत भेद ने / छीन ली हमारी शक्ति। / कार्बन-विकर्षण-भाव / जारी रहेगा यदि / इसी तरह आपस में।”⁷

यदि यह असमानता का भाव समाज में और अधिक दिन तक विद्यमान रहा तो संभव है कि यह महान भारतीय संस्कृति एक दिन समाप्त हो जाए इसलिए निम्न जातियों के लिए उच्च जातियों की यह घृणा समाप्त होनी चाहिए—

“नीचों के साथ यदि / उच्च जातियों की घृणा / द्वन्द्व कलह वैमनस्य, / क्षुद्र उर्मियों की तरह / टक्करें लेते रहे तो / निश्चय है / वेग उन तरंगों का / और घट जाएगा / क्षुद्र से क्षुद्रतर होकर मिट जायेंगी।”⁸

कुसुम का रूपक बांधकर कवि निराला ने ‘रास्ते के फूल से’ नामक कविता में प्रतीकात्मक रूप से दलितों की हीनावस्था का चित्रण किया है। आज शूद्रों का समाज में वही स्थान है जो कि एक सूखे हुए, धूल में मिले हुए फूल का होता है। दलित कुसुम धूल में नजर गड़ाये रहता है और सभी पथिकों के सामने करुणा की झोली फैलाये रहता है—

“झोली करुणा की मिखा की, / दलित कुसुम! क्यों कहो, / धूलि में नजर गड़ाये हो फैलाये ?”⁹

जिस लता में कुसुम खिला था वह आंधी से टूट गई है। सवर्णों ने वर्ण-व्यवस्था में अपनी सुविधानुसार परिवर्तन किए हैं और प्रत्येक काल में उनकी व्याख्या में आया परिवर्तन शूद्रों की दशा को और अधिक दयनीक बनाता गया है।

गोस्वामी तुलसीदास को विषय बनाकर लिखी गई कविता ‘तुलसीदास’ में निराला ने तत्कालीन भारतीय समाज में शूद्रों की दशा का बड़ा मार्मिक चित्रण किया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तुलसीदास के प्रादुर्भाव को हिन्दी काव्य के क्षेत्र में एक चमत्कार माना है।¹⁰ आचार्य शुक्ल के इस सामान्य से दिखने वाले कथन में तुलसीदास के व्यक्तित्व की अनेक सूक्ष्म अभिव्यंजनाएं छिपी हैं। तुलसीदास की प्रतिभा बहुमुखी थी। तुलसीदास ने तत्कालीन समाज की सीमाओं को वर्ण-व्यवस्था का पक्षधर होने के बावजूद पहचाना था।

मुसलमानों के सम्पर्क में आने के बाद हिन्दुओं की जाति-वर्ण व्यवस्था और अधिक कठोर हो गई। "हिन्दू समाज व्यवस्था का शिथिलायमान ढांचा अवधानपूर्वक कसा जाने लगा। फक्कड़ और अक्खड़ निर्गुणियों के वाचनिक आक्रमणों के बावजूद जाति-पांति की स्मृति-प्रतिपादित प्रथा कठोर हो उठी।"¹¹ मुसलमानों ने हिन्दुओं को पराजित करके उन्हें अपनी दासता को स्वीकार करने के लिए विवश कर दिया था। ऐसे में भारत सांस्कृतिक पतन के गर्त में चला गया। क्षत्रिय जब अपनी रक्षा नहीं कर सकते थे तो वे अन्य वर्णों की रक्षा कैसे करते। सवर्णों ने अपनी पक्षधरता त्याग दी। शूद्र जस के तस खड़े मार खाते रहे। अपने काव्य में इनका कई स्थानों पर तुलसीदास ने यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया।

'तुलसीदास' नामक लम्बी कविता में निराला ने मध्यकालीन समाज की नई तरवीर प्रस्तुत की है। मध्यकाल में समाज का जो पतन हुआ और पतन में शूद्रों पर जो अत्याचार हुए, वह इस कथा की पृष्ठभूमि है।¹² "कवि ने तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था और शूद्रों, द्विजों के भेदभाव का चित्रण किया है। तत्कालीन समाज में क्षत्रियों का बल नष्ट हो चुका था। उनमें केवल मिथ्या गर्व ही शेष रह गया था। द्विज चादुकार हो गए थे। शूद्रों की अवस्था बड़ी शोचनीय थी।"¹³ मध्यकालीन समाज की यही मूल चिंता होनी चाहिए थी, जिसको निराला के अलावा कोई अन्य कवि नहीं पहचान सका।

शूद्र का जीवन पशु के समान है। कवि को इस तथ्य का पूर्ण अहसास है। "कवि को मूक पशुओं के समाज द्विजों द्वारा ग्रसे जाने वाले शूद्रों की यातना की अनुभूति बड़ी तीखी थी। वर्ण-व्यवस्था की भेदभाव की नीति निराला को व्यथित कर रही थी।"¹⁴ इस व्यथा का उन्होंने कविता में उद्घाटन किया है—

"वे शेष-श्वास, पशु, मूक-माष, / पाते प्रहार अब हताश्वास; / सोचते कमी, आजन्म
ग्रास द्विजगण के / होना ही उनका धर्म परम, / वे वर्णाश्रम, रे द्विज उत्तम / वे चरण-चरण बस,
वर्णाश्रम रक्षण के।"¹⁵

निराला ने यहाँ शूद्रों के जीवन का इतना यथार्थ वर्णन किया है कि कोई भी उनकी संवेदना को सतही नहीं कह सकता। सदियों से दबाये जाने के बाद जिस अवस्था को शूद्रों ने अपना 'परम धर्म' स्वीकार कर लिया है, वह केवल सतही सहानुभूति के माध्यम से अभिव्यक्त नहीं की जा सकती। शूद्रों की जो भाग्यवादी दृष्टि निर्मित हो गई है, उसको निराला ने यहां स्पष्ट किया है।

शूद्रों के लिए मंदिर में प्रवेश की समस्या हिन्दू समाज की एक बहुत बड़ी समस्या है। 'पश्चिमीय जन' अर्थात् निम्न कुल उत्पन्न व्यक्ति सदैव मंदिर से बाहर ही खड़ा रहा है— 'पश्चिमीय के लिए सदा ही निषेध रहा मंदिर में।'¹⁶

कविता के अन्त में जब स्वामी जी जीने लगते हैं तो कहते हैं कि "मैं वहीं हूँ जो बाहर खड़ा है"¹⁷

यही समानता का संदेश है जो निराला इस कविता के माध्यम से देना चाहते थे।

'संत कवि रविदास जी के प्रति' में भी निराला का शूद्रों के प्रति दृष्टिकोण पता चलता है। जाति

को गौरव मानकर कर्म और ज्ञान के महत्व को स्वीकार किया है—

"कर्म के अभ्यास में, अविरत बहे / ज्ञान-गंगा में, समुज्ज्वल चर्मकार, / चरण छूकर
कर रहा मैं नमस्कार।"¹⁸

संत रविदास के पैर छूने से ही यह सिद्ध हो जाता है कि निराला जाति को ज्ञान और कर्म के सामने कितना हेय मानते थे।

कवि की यथार्थपरक दृष्टि मनोरम दृश्यों को छोड़कर सामान्य दृश्यों तथा निम्न समझे जाने वाले लोगों पर टिकी है। 'प्राचीन कथा और पौराणिक सन्दर्भ के समकक्ष तत्कालीन स्थितियों को रखकर कवि ने यहां बड़े गहरे व्यंग्य की सृष्टि की है।'¹⁹ कवि ने रामराज के यथार्थ को आज से जोड़ते हुए भारतीय इतिहास के स्वर्ण युग की सच्चाई को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत कर दिया है। एक शूद्र स्त्री के प्रति निराला की करुणा सपाट गद्यात्मकता के भीतर से उभर कर सामने आयी है—

"मैंने देखा, बड़ा मैला / मन उसका समाज से / चोट खायी हुई वह रामजी के राज
से / शूद्रों को मिला नहीं / जिनसे कुछ भी कहीं / ढांडस बंधाया मैंने मीठे-मीठे शब्द कहकर
/ देखती रही वह आंसुओं की आंखों रह रहकर।"²⁰

प्रथम और द्वितीय पंक्ति में जहां शूद्र स्त्री के हृदय के विक्षोभ को अभिव्यक्ति मिली है, वही शेष पंक्तियों में सूक्ष्म व्यंग्य की सृष्टि करके हिन्दुओं की समस्त धार्मिकता एवं आध्यात्मिकता पर प्रहार किया गया है।

गोड़इत बदलू अहीर के दरवाजे पर आकर डिंटी साहब के आने की सूचना देता है। बदलू डरकर दबकर उसे देखता है। गोड़इत शासक और शासित के बीच मध्यस्थता का काम करता है। वह इस बात को स्वीकार भी करता है—

“जमींदार के हैं हम/मालिक का भला जहां वहां है हमारा भला”²¹

इस कविता के दूसरे पक्ष में किसान और छोटे-छोटे काम करने वाले वर्गों का एक साथ उठ खड़े होना दिखलाया गया है। प्रचलित बेगारी और मुफ्तखोरी का जमकर विरोध दिखाया गया है। बदलू को गुस्सा आ जाता है और वह गोड़इत की नाक पर एक धूसा लगाया है। गोड़इत जमीन चूमने लगता है—

“जमकर बदलू ने बदमाश को देखा, फिर/उठा क्रोध से भरकर /और एक धूसा तानकर नाक पर दिया।/गोड़इत प्रेमीजन था, /जमीं चूमने लगा।”²²

किसानों में शोषण के विरुद्ध चेतना तो थी परन्तु कोई पहल करने वाला चाहिए था। बदलू के द्वारा पहल होते ही कुम्हार, तेली, चमार, नाई, कहार, इत्यादि दलित जातियों के लोग भी उसकी तरफ आकर खड़े हो गए। “दरअसल यह निराला का युग बोध है, वे युगचेता बनकर जन-मानस को कर्म चेतना दे रहे हैं। युग का नेतृत्व अब तक उन्होंने नहीं किया था, वे अब तक मानव की सार्थकता मनुष्यत्व की कर्म चेतना और मानवीय उत्थान की सैद्धान्तिकता को व्यवहार में ला रहे थे।”²³

जिससे निराला के काव्य में दलित-चेतना के विश्लेषण में दलितों के आक्रोश की संक्षेप में चर्चा करना अपरिहार्य है। कवि का मन दलितों के ऊपर होने वाले अत्याचारों को देखकर सभ्य समाज के खिलाफ विद्रोह करता है। रामविलास शर्मा कवि की विद्रोही चेतना की कविताओं के विषय में कहते हैं कि “सामाजिक रचनाओं में दलित-वर्ग के प्रति उन्होंने भावुक सहानुभूति प्रकट की तो साथ ही सामाजिक ढांचा बदलने के लिए विप्लव और क्रांति की मांग भी की।”²⁴ विद्रोही संवेदना की रचनाओं में ‘बादल-राग’ कविता विशेष उल्लेखनीय है। ‘बादल’ निराला के सर्वाधिक प्रिय विषयों में से एक हैं।

“बादल का कवि के रचनात्मक व्यक्तित्व से गहरा संबंध है और वे इसको अपने अनेकानेक भावों और विचारों के प्रकाशन का एक बहुआयामी साधन बना लेते हैं।”²⁵ छठी कविता में विप्लवी बादल को दलित जनों के लिए कल्याणकारी बताया गया है। वह दलितों में स्वर्णिम भविष्य की आशा का संचार करता है। इसमें कवि यह बताता है कि यह बादल परिवेश की आवश्यकताओं की देन है। यह समाज के धनाढ्य वर्ग पर कहर बन कर टूटता है लेकिन दलित वर्ग के लिए नयी आशा तथा जीवन का प्रतीक है— “हंसते हैं छोटे पौधे लघुभार/शस्य अपार,/हिल-हिल/खिल-खिल,/हाथ हिलाते, /तुझे बुलाते/ विप्लव-रव से छोटे ही हैं शोभा पाते।”²⁶

उसके गर्जन से पूरी पृथ्वी कांप उठती है लेकिन वह (दलित) दुःख से तप्त धरती पर विप्लव का जलधर बुलाता है जिसकी ओर नरककाल आशा भरी दृष्टि से निहारती हैं। वह जनता को विश्वास दिलाता है कि आतंक का सहारा लेने पर भी धनी वर्ग विप्लवी बादल के वज्र-गर्जन से सिहर उठता है।”²⁷ किसान अधीर भाव से उसे बुलाता है—

“जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर,/तुझे बुलाता कृषण अधीर,/ऐ विप्लव के वीर। /चूस लिया है उसका सार, /हाड़-मात्र ही है आधार,/ऐ जीवन के पारावार।”²⁸

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि निराला विद्रोह के कवि हैं। दुःख के सागर में डूबे हुए दलित को वह केवल सक्रिय होने के लिए ही नहीं कहते अपितु स्वयं भी अन्याय के खिलाफ बिगुल बजाते हैं। दलितों के जीवन में आमूल परिवर्तन की आवश्यकता को सबसे पहले निराला ही रेखांकित करते हैं। निराला काव्य पर विहंगम दृष्टि डालने से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि इसमें दलित वर्ग की पक्षधरता का कवि का संकल्प आदि से अन्त तक विद्यमान है। कवि दलितों की यथार्थ स्थिति का चित्रण करके

उनमें जागृति लाने का कार्य भी बखूबी करता है। कवि सामाजिक अलगाव के कारणों की पहचान करता है। उन कारणों का गहराई से विश्लेषण करता है तथा फिर उन्हें दूर करने का प्रयास करता है। दलित की पक्षधरता कवि की लेखन प्रक्रिया का अविभाज्य अंग है। निस्संदेह निराला का काव्य अनेक विरोध भावों को अपने अन्दर समेटे हुए है इसलिए उनका काव्य सार्थक है। गहरे अन्तर्विरोधों के बावजूद निराला एक क्षण के लिए भी दलित वर्ग से दूर नहीं हुए हैं। अपनी कविताओं में कवि शोषक शक्तियों पर भरसक आक्रमण करने की मुद्रा में है। इसके लिए कवि दलितों के संगठन की आवश्यकता पर विशेष बल देता है।

सन्दर्भ :

1. निराला रचनावली, भाग 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 123-124
2. निराला रचनावली, भाग 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 136
3. वही, पृष्ठ 137
4. वही
5. निराला साहित्य में युगीत समस्याएं, सरोज मार्कण्डेय, विद्या प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 84
6. निराला रचनावली, भाग 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 114
7. निराला रचनावली, भाग 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 167
8. वही, पृष्ठ 167-168
9. वही
10. हिन्दी साहित्य का इतिहास, आ. रामचन्द्र शुक्ल, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, नई दिल्ली, पृष्ठ 129
11. तुलसी काव्या मीमांसा, उदयभानु सिंह, पृष्ठ 228
12. निराला, रामविलास शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 87
13. क्रांतिकारी कवि निराला, बच्चन सिंह, वाराणसी प्रकाशन, विश्वविद्यालय नवीन प्रकाशन संस्करण, 1999, पृष्ठ 147
14. निराला साहित्य में सामाजिक चेतना, सुरेश चंद शर्मा, सार्थक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 120
15. निराला, रचनावली, भाग 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 287
16. निराला, रचनावली, भाग 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 107
17. वही, पृष्ठ 108
18. वही, पृष्ठ 83
19. आत्महंता आस्था, दूधनाथ सिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ 250
20. निराला, रचनावली, भाग 2, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 72
21. वही, पृष्ठ 201
22. वही, पृष्ठ 202
23. निराला काव्य में मानवीय चेतना, रमेशदत्त मिश्र, के.एल. पचौरी प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ 201
24. निराला, रामविलास शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 47
25. निराला आलोचकों की दृष्टि में, सं. वचनदेव कुमार, बिहार ग्रन्थ कुटीर, पटना, पृष्ठ 87
26. निराला, रचनावली, भाग 1, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 129
27. वही, पृष्ठ 135
28. निराला, रामविलास शर्मा, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 140
